जैन धर्म में श्रमणियों की गौरवमयी परम्परा

☐ विदर्भकेसरी वाणिभूषण श्री रतनमुनि

सदा से ही नारी का स्वरूप सुर्खियों में रहा है। पर उसकी कमनीयता के कारण उसे दूसरे दर्जे का स्थान मिला। उसका महत्त्व कम आंका गया।

जैन तीर्थंकरों का चिन्तन बड़ा स्पष्ट तथा महत्त्वपूर्ण रहा है। ऋषभदेव ने ब्राह्मी व सुन्दरी नाम की अपनी दो पुत्रियों का योग्य मार्गदर्शन कर उनकी सम्पूर्ण प्रतिभा का उपयोग बड़े ही श्रेष्ठ ढंग से किया। भगवान् महावीर का यह कथन बड़ा ही सारपूर्ण है कि—"आत्मा, आत्मा ही है, वह न स्त्री हैं, न पुरुष है, न कुछ अन्य।"

ऋषभदेव के पूर्व किसी ने सोचा भी न था कि नारी को इतना अपूर्व सम्मान मिल सकेगा। माता मरुदेवी प्रथम सिद्ध होगी और जीवन की लिप्तता से परे ब्राह्मी तथा सुन्दरी क्रमशः प्रथम व द्वितीय श्रमणी बनाई जावेगी। सभी तीर्थंकरों में सबसे महत्त्वपूर्ण तीन लाख श्रमणियों का अस्तित्व प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के समय हुआ। यद्यपि उसके बाद वाले तीर्थंकरों में अधिक श्रमणियाँ भी रहीं पर एक प्रारंभ की दृष्टि से यह परिमाण विस्मय पैदा करने वाला है।

श्रमणपरम्परा की दोनों शाखाओं—जैन व बौद्ध में स्त्री को धर्माचरण का अधिकार रहा जब कि अन्य धर्मों में नारी का धर्म के अनेक क्षेत्रों में प्रवेश निषिद्ध था। बौद्धों में तो नारी का श्रमणी रूप जैन परम्परा के बहुत बाद का है पर बुद्ध ने सर्वथा पतित नारियों को अपने धर्म में दीक्षित कर नारी को जो महत्त्व दिया वह उल्लेखनीय है। भगवान् महावीर ने भी निचले से निचले तबके को प्रोत्साहन दिया। चन्दना जैसी विक्रीत दासी को उन्होंने न केवल प्रव्रज्या दी वरन् उसे ३६००० साध्वियों की प्रमुख बनाया।

नारी का विलासमय रूप श्रमणपरम्परा में अभीष्ट नहीं था। यह एक विराग परम्परा रही है। इसमें यदि उजागर हुआ है तो वह है नारी का मातृरूप। इस संदर्भ में नारी पुरुष से कई गुना श्रेष्ठ सिद्ध हुई है। हजारों पिता से एक माता गौरव में श्रेष्ठ होती है, इस तथ्य को प्रमाणित किया गया। मातृरूपा नारी के उपदेश व धर्मज्ञान की गूढ़ बातों को सबने अपनाया। यद्यपि पुरुषप्रधान समाज ने कई कुठाराघात भी किये व नारी को समग्रतः उभरने नहीं दिया, फिर भी नारी ने श्रेष्ठता की पताका फहराकर धर्मसंघ को उज्ज्वलता प्रदान की है।

विभिन्न तीर्थंकरों के काल में श्रमणियों का परिमाण बहुत अधिक रहा। श्रमणों से वे दुगुनी तिगुनी तक रहीं। इससे सिद्ध होता है कि नारी की श्रेष्ठता से यह धर्म, यह दर्शन अभिषिक्त रहा। २४ तीर्थंकरों के धर्मपरिवार में श्रमणियों की संख्या इस प्रकार है—

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदेव—तीन लाख, अजितनाथ—तीन लाख तीस हजार, संभवनाथ—तीन लाख छत्तीस हजार, अभिनन्दन स्वामी—छह लाख तीस हजार, सुमतिनाथ—पाँच लाख तीस हजार, पद्मप्रभ—चार लाख बीस हजार, सुपार्श्वनाथ—चार लाख तीस हजार, चन्द्रप्रभ स्वामी—तीन लाख अस्सी हजार, सुविधिनाथ—एक लाख बीस हजार, शीतलनाथ—एक लाख छह हजार, श्रेयांसनाथ—एक लाख तीन हजार, वासुपूज्यजी—एक लाख, विमलनाथ—एक लाख आठ सौ, अनंतनाथ—बासठ हजार, धर्मनाथ—बासठ हजार चार सौ, शांतिनाथ—इकसठ हजार छह सौ, कुंथुनाथ—साठ हजार छह सौ, अरनाथ—साठ हजार, मल्लिनाथ—पचपन हजार। मल्लिनाथ चूंकि स्वयं स्त्री रूप थे, उनकी आभ्यन्तर परिषद् की साध्वियों को उनके समवसरण में अग्रस्थान प्राप्त था। मल्लिकुमारी ने नारी श्रेष्ठता का प्रमाण इस रूप में दिया कि वे ही एकमात्र ऐसी तीर्थंकर हैं जिन्हें दीक्षाग्रहण के दिन ही केवलज्ञान प्राप्त हो गया। उनका प्रथम पारणा भी केवलज्ञान में ही हुआ। मुनिसुव्रत—पचास हजार, नमिनाथ चालीस हजार, अरिष्टनेमि—चालीस हजार। इनके धर्मसंघ में इनकी वाग्दत्ता राजीमती की प्रव्रज्या स्वयं प्रभु के द्वारा होना एक अद्वितीय प्रसंग है। राजीमती द्वारा रथनेमि को प्रव्रजित रूप में प्रतिबोध देना भी एक विलक्षण प्रसंग है। पार्श्वनाथ—अड़तीस हजार, भगवान् महावीर—छत्तीस हजार।

उक्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि बाद में चलकर श्रमणियों की संख्या में न्यूनता आई, पर इसका कारण और भी धर्मदर्शनों का उदय हो सकता है। उस समय यह संख्या भी बड़े महत्त्व की संख्या थी। आज का भी आंकड़ा हमें "जैन जगत" मई १९८२ के अंक में प्रकाशित स्व. श्री अगरचन्दजी नाहटा के एक लेख से मिलता है, जो उन्होंने भावनगर के श्री महेन्द्र जैन द्वारा सम्पादित 'धर्मलाभ' नामक पत्रिका से उद्धृत किया है। १९८१ में जो संख्या थी वह उस पत्रिका के अनुसार इस प्रकार थी—

श्वेताम्बर मूर्तिपूजक ३५९० श्रमणी, स्थानकवासी १७६५, तेरापंथी ५३१, दिगंबर आर्यिकाएँ १६८। इस प्रकार कुल ६०५४ साध्वियों की गणना की गई थी। अभी भी लगभग इतना परिमाण तो है ही। हालांकि विगत वर्षों में बढ़ रहे गुण्डा तत्त्वों से विहार करती साध्वियों को प्रताड़ना दी गई और समाज के सामने उनकी सुरक्षा का प्रश्न भी खड़ा हुआ है पर फिर भी नारीवर्ग में धर्म के प्रति सम्मान व प्रव्रज्या ग्रहण की प्रवृत्ति अधिक ही पाई जाती है।

श्रमणियों की अवमानना की स्थिति में समाज में तात्कालिक रोष भी उपजता है। पर इसका स्थायी हल खोजने का प्रयास नहीं किया जा रहा है। कहीं प्रयास में शिथिलता बरत कर वाहन का उपयोग करने का सुझाव है तो कहीं साथ में गार्ड भेजने की बात है। जो भी हो, एक योग्य हल खोजा जाना जरूरी है।

स्त्रियों की मुक्ति पर प्राचीन काल में प्रश्न-चिह्न लगा है। परन्तु मुक्ति को प्राप्त स्त्रियों व श्रमणियों के उदाहरण से हमारा धर्म-इतिहास परिपूर्ण है। रत्नत्रय की प्राप्ति स्त्रियों के लिए संभव है। किसी भी आगम में स्त्रियों के रत्नत्रयप्राप्ति का निषेध नहीं है। पुरुष के समान स्त्री भी मुक्ति की हकदार है।

श्रमणियों में परिमाण के उपरोक्त आंकड़ों पर दृष्टिपात करने से भले ही उनकी संख्या में न्यूनता आने का तथ्य उजागर हुआ हो पर उससे उनकी दिव्यता में कोई कमी नहीं आई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मतीर्थस्थापक तीर्थंकरों ने धर्म को धारण करने वाले श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका को समान रूप से महत्त्व दिया है। किसी को कम या अधिक नहीं। यह सुव्यवस्था केवल जैनदर्शन में ही देखने में आती है।

श्रमणीवर्ग ने सदा ही समाज में व्याप्त विकृतियों पर स्पष्ट इंगित किये हैं और मानवीय पक्ष को जीवंत रखा है। श्रमणीवर्ग ने समाज को संजीवनी प्रदान की है, यदि ऐसा कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

श्रमणियों को लेकर साध्वी की वंदनीयता का प्रश्न भी उठा है। धर्मदास गणिरचित उपदेशमाला में कहा गया है—

"महासती चन्दनबाला ने जैसे सद्यःप्रव्रजित मुनि को जो सम्मान दिया, अभ्युत्थान और नमन किया वैसे ही हर श्रमणी को करना चाहिए।" और यही परम्परा चली आ रही है। पर सद्यःदीक्षित मुनि को भी दीक्षापर्याय व ज्ञान में बड़ी साध्वी द्वारा नमन आज के युग में कुछ अजीब सा लगता है। कहीं-कहीं इसे नये रूप से चिन्तन करने की बात उठी है। ज्ञानगुण-सम्पन्न का मान होना ही चाहिए। कहा नहीं जा सकता यह प्रवृत्ति कब और कैसे प्रवेश कर गई। समाज में पुरुष की प्रधानता शायद इसका कारण रही हो। आगमों तक में इसी कारण से पुरुष की ज्येष्ठता दर्शायी गयी है।

जैन आगम स्थानांगसूत्र में दस कल्पों में 'पुरिसजेट्ठे' का उल्लेख है। यद्यपि इस कथन को कुछ लोग प्रक्षिप्त मान रहे हैं। मांग है कि आगम की सही व्याख्या हो।

यह तो नहीं कहा जा सकता है कि श्रमणियों की श्रेष्ठता की ओर किसी का ध्यान नहीं है पर अभी भी ऐसी क्रांतिकारी दृष्टि का उदय नहीं हुआ है कि संशोधन, परिवर्तन या परिवर्धन का कोई बहुत बड़ा कदम उठाया जा सके। निरन्तर प्रयास किए जाएं तो इस सन्दर्भ में कुछ आशाजनक परिणाम आ सकते हैं।

आज भी जैन साध्वी संघ उन्नत और सशक्त है। वह दूर-दूर तक पदयात्राएं कर धर्मप्रचार में उद्यत है। क्या उत्तर, क्या दक्षिण, क्या पूर्व, क्या पश्चिम, साध्वी समुदाय ने सब ओर अपने यायावरी कदम बढ़ाये हैं। उन्होंने धर्म की अलख जगाई है।

श्रमणीवर्ग एक तरह से जूझ रहा है। अथक प्रयास समाज की जागृति के हो रहे हैं। विशेषकर नारीसमुदाय पर श्रमणियों का व्यापक प्रभाव है। परिवार की धुरी नारी की जागृति यदि सही ढंग से हो सके तो बड़ा कल्याण होगा।

श्रमणियों ने इस भ्रम को तोड़ा है कि स्त्री साध्विका पूर्वश्रुत का अध्ययन नहीं कर सकती। उसे मनःपर्यवज्ञान की उपलब्धि नहीं हो सकती या उसे विशिष्ट योगज विभूतियाँ प्राप्त नहीं होतीं। यह सब चिन्तनीय एवं खोज का विषय है। नारी को आचार्य नहीं तो प्रवर्तनी जैसा पद सौंपा जाए तो उसमें भी निःसंदेह वह संघसेवा में सफलता प्राप्त कर सकेगी। कहा जाता है कि साध्वी चौदह पूर्वों का अध्ययन इसलिए नहीं कर सकती कि उसकी प्रविधियां या प्रक्रियाएं उसकी शरीरिक स्थिति के कारण संभव नहीं। पर यहाँ यह सोचना चाहिए कि वे तथ्य उसे ज्ञात तो हैं। जो ज्ञात हैं उसकी व्याख्या करने में भला कौन सी बाधा है?

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब हम जैन धर्म में यत्र-तत्र वर्णित विशिष्ट श्रमणियों की चर्चा करें ताकि यह जाना जा सके कि श्रमणीरूप में उसने कैसी अनुपम उज्ज्वलता पाई है और किन स्थितियों में धैर्य और सहिष्णुता का परिचय देते हुए ऐसे प्रमाण प्रस्तुत किये हैं जो नारी की श्रेष्ठता, पूज्यता, वंदनीयता के उज्ज्वलतम प्रमाण हैं। इसे हम ऐतिहासिक एवं पौराणिक परिवेश में परखेंगे। श्रमणियों के कारण ही धर्मप्रचार में सुविधा रही। कई श्रमणियां तो महासतियों के रूप में पूज्य हैं। पार्श्वनाथ की कई शिष्याएं तो विशिष्ट देवियों के रूप में भी स्थापित हुईं।

प्रथम श्रमणी ब्राह्मी तीन लाख श्रमणियों की प्रमुखा थी। सुन्दरी के श्रमणी होने के पूर्व चक्रवर्ती भरत द्वारा व्यवधान होने पर भी उसने विनम्र रूप से आज्ञाप्राप्ति की स्थिति निर्मित की। यह एक सर्जकवृत्ति का प्रमाण है। उसने स्पष्ट विरोध या रोष व्यक्त करने की बजाय आयम्बिल तपादि द्वारा अपने शरीर को कृश कर लिया। अपनी रूप-सम्पदा को विरूपता का स्वरूप देकर आखिरकार प्रव्रज्या की आज्ञा पा ही ली।

ब्राह्मी और सुन्दरी द्वारा गर्वमण्डित भ्राता बाहुबलि को जिस अनूठी शैली में प्रतिबोध दिया गया यह भी एक अनुकरणीय उदाहरण है। उन्होंने बाहुबलि की भर्त्सना नहीं की वरन् 'गज से उतरो' इस वाक्य से एक व्यंजना द्वारा स्वयं बाहुबलि को आत्मचिन्तन के लिए प्रवृत्त किया। क्या ऐसा अनुपम उदाहरण अन्यत्र उपलब्ध है ?

अरिष्टनेमि की वाग्दत्ता राजीमती द्वारा प्रभु द्वारा प्रवृत्त पथ को ही अपने लिए अंगीकार करने की भावना ने उसकी चारित्रिक उज्ज्वलता को उजागर किया है। रेवताचल पर्वत पर वर्षा से भीगी साध्वी राजीमती पर श्रमण रथनेमि की विकृत दृष्टि पड़ी तो उसे संयम में स्थिर करने की जो संविधि साध्वी राजीमती द्वारा अपनाई गई, अपने आप में वह बेजोड़ है।

पुष्पचूला का अपने भ्राता पुष्पचूल से विशेष अनुराग रहा। स्थितिवश उन्हें ही परस्पर ब्याह दिया गया। पर व्यावहारिक बुद्धि के वश इस दम्पती ने ब्रह्मचर्य कायम रखा। प्रव्रज्या की अनुमति भी भाई द्वारा उसी नगर में रहने की शर्त पर दी गई जिसे आचार्य ने उनकी स्नेह भावना की उज्ज्वलता के कारण स्वीकृत किया। उसी पुष्पचूला ने मोक्ष प्राप्त किया। क्या यह उस श्रमणी की आत्मोज्ज्वलता का प्रमाण नहीं ?

दमयन्ती, कौशल्या, सीता, कुन्ती, द्रौपदी, अञ्जना जैसी सतियां जिन्होंने प्रव्रज्या भी ग्रहण की, इतर धर्मों में भी पूज्य हुईं। इनमें से कुन्ती ने तो मोक्ष भी पाया।

उदायन तापस-परम्परा को मानता था। उसकी पत्नी प्रभावती ने महावीर पर निष्ठा रखी। पति की कामनानुसार वह स्वर्ग से अपने पति को प्रतिबोध देने देव रूप में आयी। उसने पति को प्रतिबोध देकर उसे भ. महावीर के प्रति श्रद्धालु बनाया। पति के प्रति पतिव्रता का अपूर्व प्रमाण प्रस्तुत किया। निर्वाण भी प्राप्त किया।

मृगावती दीक्षित होकर आर्या चन्दनबाला के संरक्षण में धर्मसाधना करने लगी। उसकी संयमसाधना ऐसी अनुपम थी कि उसने चन्दनबाला से पूर्व कैवल्य प्राप्त कर लिया। चन्दनबाला ने मृगावती की वंदना की और उसी रात्रि उसने भी कैवल्य पा लिया। दिव्यता का यह उदाहरण कितना अनूठा है ! मृगावती ने पश्चात् निर्वाण प्राप्त किया।

बड़े अटपटे प्रसंग भी श्रमणियों में आये। पद्मावती के मन में जब वैराग्य उत्पन्न हुआ तब वह गर्भवती थी। दीक्षा के उपरांत गर्भवृद्धि से भेद खुलने लगा तो विशेष स्थिति में गुरुणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने प्रच्छन्न रूप से पुत्रजन्म को सफल बनाया। वृक्ष तले रखे जाने पर निःसन्तान व्यक्ति ने उसे ग्रहण किया। वह पुत्र करकण्डू आगे चलकर राजा बना व अपने ही पिता राजा दधिवाहन से प्रसंगवश युद्धरत हुआ। भयंकर जनहत्या को रोकने के लिए पद्मावती ने रहस्योद्घाटन किया। अपवाद का डर त्यागा। युद्ध रुक गया। एक श्रमणी द्वारा इस प्रकार का रहस्योद्घाटन कितने बड़े साहस की बात है।

अवंती नरेश चण्डप्रद्योतन की पत्नी शिवा ने आर्या चन्दना के आश्रय में रहकर मोक्ष प्राप्त किया। प्रभु महावीर के अभिग्रह की पूर्ति करने में चन्दना का चारित्र्य भी अनुपम दिव्यता लिए हुए था।

मदनरेखा ने अपने पति युगबाहु को भ्राता राजा मणिरथ द्वारा तलवार के वार से मार दिये जाने पर भी पति का परलोक सुधारने के लिये णवकार मन्त्र का जाप करवाया। फलतः वह देवरूप हुआ। हत्यारा मणिरथ मारा गया व उसके स्थान पर मदनरेखा का पुत्र गद्दी पर बैठा। दूसरा पुत्र मिथिलानरेश पद्मरथ के यहाँ पला, क्योंकि मदनरेखा हाथी द्वारा सूण्ड से उछाल दिये जाने पर विद्याधर मणिप्रभ द्वारा विमान में झेल ली गयी। कालांतर में एक गज को लेकर दोनों भाइयों में युद्ध हुआ। मदनरेखा ने, जो अब एक श्रमणी थी, सुना तो दोनों पुत्रों को प्रबोध देकर युद्ध रोका।

जैन शासन में अत्यधिक प्रसिद्ध चार चूलिकाओं की उपलब्धि साध्वी यक्षा को भी सीमंधर स्वामी के द्वारा हुई। वह भ्राता मुनि श्रीयक की मृत्यु से संतप्त थी। दो चूलिकाओं का संयोजन दशवैकालिक सूत्र के साथ व दो का आचारांग सूत्र के साथ हुआ है। ये चूलिकाएँ आगम का अभिन्न अंग बनी हुई हैं। आर्य स्थूलिभद्र भी उन्हीं के भ्राता थे जो मुनि श्रीयक से सात वर्ष पूर्व दीक्षित हुए थे।

जम्बू कुमार द्वारा अपने सह आठों पत्नियों को प्रथम रात्रि में ही विरागमय पथ पर अग्रसर किया जाना भी एक विरल घटना है। पुत्र अवंति सुकुमाल का मुनिरूप में जम्बुकी द्वारा भक्षण किये जाने पर विलाप करती माता भद्रा का व एक गर्भिणी वधू को छोड़ अन्य पुत्रवधुओं का आचार्य सुहस्ती से दीक्षा प्राप्त करना भी मर्मस्पर्शी प्रसंग है।

आचार्य हरिभद्र ने, प्रेरणा देने वाली साध्वी याकिनी महत्तरा को धर्मजननी के रूप में हृदय में स्थान दिया। उनकी प्रसिद्धि याकिनीसूनु अर्थात् याकिनीपुत्र के नाम से है।

मल्लिकुमारी के साथ तीन सौ स्त्रियों ने संयम ग्रहण किया। भ. अरिष्टनेमि से यक्षिणी आदि अनेक राजपुत्रियों ने दीक्षा प्राप्त की। यक्षिणी श्रमणीसंघ की प्रवर्तिनी नियुक्त हुई। पद्मावती आदि अनेक राजकुमारियों ने दीक्षा ग्रहण की।

भगवान् महावीर से देवानन्दा (पूर्वमाता) ने दीक्षा ग्रहण की। क्षत्रियकुण्ड के राजकुमार जमालि सह उसकी पत्नी प्रियदर्शना व छह हजार स्त्रियों ने दीक्षा ग्रहण की। आर्या चन्दना की सेवा में काली, सुकाली, महाकाली, कृष्णा, सुकृष्णा, महाकृष्णा, रामकृष्णा, पितृसेनकृष्णा, महासेनकृष्णा आदि चम्पानगरी की राजरानियों ने दीक्षा ग्रहण की व कठोरतर तपश्चर्या करके निर्वाण प्राप्त किया।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है
www.jainelibrary.org
Jain Education International For Private & Personal Use Only

इस तरह हमने देखा कि एक आश्चर्यजनक समता के भाव से जैनधर्म समृद्ध है। इसी कारण यहाँ पुरुष के साथ नारी, श्रमण के साथ श्रमणी को भी पूरा-पूरा अवसर मिला है। किसी भी पंथ की श्रमणी की बनिस्बत जैन संघ की श्रमणी की स्थिति बड़ी गरिमामयी है।

इक्कीसवीं सदी की ओर जा रहे विश्व में जैन समाज का नारीवर्ग आधुनिक भले न हो पर आध्यात्मिक रूप से समृद्ध अवश्य होगा। अनुकरणीय उदाहरण वही प्रस्तुत कर सकेगा।

□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org